प्रथम भारतीय
PRATHAM BHARTIYA

WORLD PEACE HOLA MOHALLA SHRI BHAINI SAHIB

SHRI SATGURU JAGJIT SINGH JI MAHARAJ

1

5

2

6

3

7

4

8

Designed by : Computer dot Com (Sukhdeep Singh) Tel.: 9312646677, 011-25992962

।।ऊँ श्री सत्‌गुरु रामसिंह जी सहाय।।

श्री सत्‌गुरु जगजीत सिंह जी की अपार अनुकम्पा एवम् सानिध्य में सृष्टि सम्वत् 1955875103 के अन्तर्गत विक्रमी सम्वत् 2056, श्री कृष्ण सम्वत् 5238, कल्कि सम्वत् 5103 गुरु नानक सम्वत् 533, ईस्वी सन् 2002–2003 को प्रारम्भ किया

मासिक

प्रथम भारतीय

PRATHAM BHARTIYA

अंक : 44 वर्ष: 4 मार्च, 2006 फाल्गुन–शुक्ल सम्वत् 2062 मूल्य 10 रुपये **Monthly**

यह सच है कि कूकाओं का अंग्रेज सरकार के प्रति वफादार होने का सवाल ही पैदा नहीं होता। (डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1904 लुधियाना)

मुड़न कद होसी

आसां में जद याद करोगे, कहि माही तुर चलिआ।
लंबे पंध मुडन कद होसी, सोच इहो दिल हलिआ।।
कुंजां वांग विछोड़े अंदर रात दिने कुरलांसां जद तक
मिलना बलबल मचसां, रोण न जासी ठल्लिआ।।

सभ शाखें हैं गुरु नानक की

उदासी निर्मले व निहंग सभ शाखें हैं गुरु नानक की,
निरंकारी व कूकों ने उसी की ओठ तानी है
किसी ने यक्क गुरु माना किसी ने दो या दस बारां
गुरु नानक तो औ हजरत हमारा सबका बानी है।
मिला जो साथ अपने सब अलहिदा मत किसी को कर
गर खालसा कौम तुमने तबाही से बचानी है।
सदा भाइयों की बरकत से फते होती है दुनिया में
नफाके खाना जंगी बरबादीए–खाना की निशानी है
यह बातें तुम मेरी अकाली सज्जनों सुन लो
ना नफरत इसलिए करना कि आलम की जबानी है

''यदि विश्व शांति चाहते हो तो मांस–मछली त्याग कर सात्यविक भोजन खाओ''

श्री सत्गुरु जगजीत सिंह जी महाराज का बैकांक में विश्व शांति हेतु शुभ उपदेश

(साभार 5 जुलाई 1962 दैनिक नवाँ हिन्दुस्तान से)

प्रथम भारतीय के सहयोगी संत दयाल सिंह जी चाना के जीवन से जुड़े प्रकाश चित्र (1से8)
(चित्र 9) प्रधान साधा सिंह जी, श्री राकेश कुमार क्षेत्रीय सेवा प्रमुख सेवा भारती को माला व शिरोपा प्रदान करते हुए।
(चित्र 10) श्री राकेश कुमार जी को सेवा कार्य हेतु सहयोग निधि प्रदान करते हुए संत दयाल सिंह जी।
(चित्र 11) डॉ. लाल चन्द्रा जी व अन्य। श्री सत्गुरु जगजीत सिंह जी की देह आरोग्यता हेतु आयोजित स्वास्थ्य मेले के अन्य दृश्य।
(अंतिम पृष्ठ) श्री सतगुरु जगजीतसिंह जी की हजूरी में बैठे सेवक हरपाल सिंह, डॉ. हरमेन्द्र सिंह बेदी व अन्य। परमपूज्य माता चन्दकौर जी व संत दयालसिंह जी की धर्मपत्नी। श्री सत्गुरु जगजीत सिंह द्वारा अपने शिष्य स्वतंत्रपाल सिंह को प्रदान की गई ईट व प्रथम भारतीय का दृश्य। श्री सत्गुरु जगजीतसिंह जी की हजूरी में बैठे श्री संत अवतार सिंह, मुख्यमंत्री शीला दीक्षित, श्री संत रछपाल सिंह जी।

सूचना

संत राजेन्द्र सिंह निराला (हम हिन्दू हैं) के सन्दर्भ में किसी भी व्यक्ति को कोई भी जानकारी हो, तो प्रथम भारतीय कार्यालय में सम्पर्क करें सूचना देने वाले का नाम, इत्यादि गुप्त रखा जायेगा।

मार्ग दर्शक व सानिध्य प्रदाता

श्री108सत्गुरु जगजीत सिंह जी महाराज

प्राचीन सनातन वैदिक देहधारी गुरुनानक–गुरु गोविन्द सिंह गुरु शिष्य परंपरा के वर्तमान गुरु

प्रथम भारतीय
PRATHAM BHARTIYA

अंक : 44 वर्ष 4 मार्च 2006 फाल्गुन सम्वत 2062

सम्पादकीय कार्यालय:

प्रथम भारतीय मासिक
1681, मेन बाजार पहाड़गंज,
चित्रगुप्त मंदिर के सामने
नई दिल्ली–110055

Editor Office

1681, Main Bazar Pahargang,
Opp. Chitragupta Mandir,
New Delhi-110055
Ph.(011) 23580875, Mob.9868863312
email: sp_singh2679@yahoo.co.in

विषय सूची

हम सभी देश भक्तों के साथ है

श्री सत्गुरु प्रताप सिंह जी महाराज

हैनरी करैग पंजाब का गवर्नर था । उसके दिल में ख्याल था कि अकाली अन्य है व यह कूका है, शायद हमारे साथ मिले । लेकिन अकाली–कूके का तो प्रश्न ही नहीं, प्रश्न तो इस बात का है कि देश द्रोही कौन है और देश भक्त कौन है । चाहे वह अकाली है, चाहे वह नामधारी है,चाहे निहंग, चाहे, निर्मला, चाहे हिन्दू, चाहे सनातनी है, चाहे समा. जी है–हम सब देश भक्तों के साथ हैं ।

श्री 108 सत्‌गुरु जगजीत सिंह महाराज

सत्‌गुरु जी ने उसी शरीर में आना है और उनके आने से शांति होगी

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु।।
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु।।
जाही कुल ते प्रगटि होए ताहीं कुल को नाम।।
पुंन द्वादश गुरिंड को मेरी है प्रनाम।।

प्रमुख स्वामी जी, स्वामी नारायण जी मत वाले, उनकी सेवा में स्वामी आत्मा सरूप जी और सारे आये दर्शकों, हमें बहुत प्रसन्नता होती है, जब इस समय घोर कलुकाल में हम लोग अपने सत्‌गुरु के मार्ग पर चलकर लोगों को प्रेरणा देते हैं कि सुख सत्‌गुरु की शरण में आकर ही मिलता है।

सत्‌गुरु रामसिंह जी श्री सत्‌गुरु नानक देव जी के बारहवें स्वरूप में आए। एक इतिहासकार ने लिखा है कि जैसा सत्‌गुरु रामसिंह जी के समय में हुआ, पहले गुरु साहिबान के समय में नहीं हुआ। गुरु नानक देव जी सच्चे पातशाह ने बहुत भ्रमण किया। बहुत देशों में गए। यह इतिहासकार लिखता है कि श्री सत्‌गुरु रामसिंह जी के समय में उन्होंने दस वर्ष में सात लाख शिष्य बनाये, केवल यही नहीं कि ऐसी पगड़ी बांध ली या कपड़े पहन लिये, उनके सिमरण का प्रभाव ऐसा था कि जिसके कान में मंत्र दे देते थे, उनकी काया पलट हो जाती थी।

इस तरह उन्होंने लोगों से नशे छुड़वाये। जिनका नशा छोड़ना असंभव लगता था। एक दरबारा सिंह नाम का आदमी था, जिला लुधियाणा पंजाब का। वह अमल खाता था। जब शराब निकालता था, 500 चिड़ा, 100 मुर्गे और 5 बकरे मार कर शराब में डालता था और वह शराब पीता था। अफीम इतनी खाता था कि जब बाहर शौच को जाता तो पेड़ों को अफीम लगाकर रखता था कि जहां भी जाये अफीम खाने को मिले। इतना नशा करने वाले आदमी को जब कान में मंत्र दिया और कहा कि ये सबसे ऊंचा अमल है, तो उसने अमल छोड़ दिया। सत्‌गुरु जी ने ऐसे आदमी अपने शिष्य बनाए।

मूल रूप में सत्‌गुरु जी ने अहिंसा का मार्ग बताया। बाणी में व्रत के संदर्भ में लिखा है।

ऐकादशी निकटि पेखहु हरि रामु। इंद्री बसि करि सुणहु हरि नामु।।
मनि संतोखु सरब जाअ दइआ। इन बिधि बरतु संपूरन भइआ।।

सत्‌गुरु जी ने जब ऐसा मार्ग अपनाया तो उनके साथ जो प्रमुख लोग थे उनको पकड़ लिया गया। हम उनको सूबा कहते हैं। वो सहायक थे, कान में मंत्र देते थे। नशे छुड़वाते थे। उन पांचों को पकड़ लिया गया। सत्‌गुरु जी ने सत्रह और सूबे बना दिये। उनको भी पकड़ लिया गया। फिर अंग्रेजों ने सत्‌गुरु जी से पूछा अब क्या करोगे? सत्‌गुरु जी ने कहा–मैं घर–घर राम सिंध कर दूंगा और जैसी मेरी जुबान में तासीर है वैसी ही सब में कर दूंगा और वैसा ही किया। जब अंग्रेज ने देखा कि ये सिर्फ धार्मिक ही नहीं है, सुधारक भी है, राजनीति की नीति को भी अच्छी तरह समझते हैं, तो उन्होंने इनका घेराव करना शुरू किया। बिना ट्रायल (Trial) किये, मुकदमा चलाये, नामधारी सिखों को तोपों के आगे उठाया। उनको कहा गया कि तुम्हें तोपों से बाधा जायेगा, तोप की तरह पीठ कर दो, नामधारी सिखों ने कहा सूरमे का काम शस्त्र के समक्ष पीठ करना नहीं है, हम सामने खड़े होंगे, वो सामने खड़े हुए।

एक वरियाम सिंह नाम का आदमी था। उसकी सिफारिश आई, उसको किसी तरीके से छोड़ना था। उसको कहा तेरा कद छोटा है, तोप के बराबर नहीं है, इसलिए तेरे को छोड़ रहे हैं। उसने माटी के डले पांव के नीचे रखकर अपने–आपको ऊंचा किया और कहा "अब तो नहीं मेरा कद छोटा? मेरे साथ जा रहे हैं, मैंने उनके साथ जाना है। उनका मुखी जो हीरा सिंह जत्थेदार था, उसने कहा *"नौ महीने माता के पेट में रहकर हम फिर आयेंगे। जब तक आप जाओगे नहीं हम आपसे जूझते रहेंगे।"*

सत्‌गुरु राम सिंध जी को देश से निष्कासित किया गया। सत्‌गुरु जी ने जाते समय कहा "मैं इसी शरीर में वापिस आऊंगा। जब नजरबंदी के दौरान एक दिन सत्‌गुरु जी चले गये तो अंग्रेजों ने ऐसी बात बनायी कि डायरिया के कारण 1885 में सत्‌गुरु जी का शरीर छूट गया है और उनका दाह संस्कार कर दिया गया है। हम उस वर्ष की रिपोर्ट देखते हैं, तो उस वर्ष व जेल में किसी को डायरिया हुआ ही नहीं है। एक अन्य पत्र मिला है। 1886 का जिसमें लिखा है कि गुरु जी को दूसरी जगह भेज दिया जाये, यहां तो इनको सिख मिलकर जाते हैं। इसके अतिरिक्त जब जर्मन की जंग लगी, बहुत से लोगों ने सत्‌गुरु जी के दर्शन किये। रूस में सत्‌गुरु जी के दर्शन किये। एक आलम सिंह नाम का आदमी लिखता है–"डिस्ट्रिक्ट गजटीपर लुधियाना का कोरा झूठ हमने सत्‌गुरु जी के दर्शन किये हैं।" यह सही बात है कि सत्‌गुरु जी ने उसी शरीर में आना है और उनके आने पर शांति होगी। समय लग सकता है, लेकिन जो सत्‌गुरु जी ने कहा है यह बात अवश्य सत्य होगी। उनके सिखों ने कभी झूठ नहीं बोला, मरने से नहीं डरे। श्री सत्‌गुरु जी ऐसी बात कैसे कर सकते हैं?

मुझे बहुत प्रसन्नता है स्वामी आत्मा स्वरूप जी ने हमारे साथ कितने घंटे बिताए, कितनी बातें बताई, इस स्थान पर जो सत्संग हो रहा है यह सबसे अच्छी बात है। इसका कण–कण धन्य है, पूज्यनीय है। प्रमुख स्वामी जी ने बहुत कृपा की है जो अपने जैसे और साधू बनाये हैं और ठीक तरीके से दुनिया को भगवान की तरफ

(शेष पृष्ठ ... पर)

नामधारी परम्परा और होला पर्व

—डा. भगवानदास वर्मा, एम.ए.,पी.एच.डी

धार्मिक उपासना के मूल्यों को सामाजिक जागरण के साथ जोड़ने की उज्जवल संत परम्परा इस देश में चली आई है। इस परम्परा में सिक्ख गुरुओं और संतों की भूमिका अग्रणी रही है। गुरु नानकदेव जी का उदय एक ओर मुसलमानों के जुल्मों का विरोध करने के लिए हुआ तो दूसरी ओर अपने ही धर्म के तथाकथित उच्चवर्णीय धर्म धर्म मार्तंडों के शोषण के खिलाफ सामान्यजनों की धर्म रक्षा के लिए हुआ। इस जमाने में संतों का आंदोलन केवल धर्म सुधार का आंदोलन नहीं था, वल्कि आम आदमी के लिए धर्म को आसान बनाने के लिहाज से सामाजिक जागरण का आंदोलन था। पंडितों तथा पाखंडियों ने भक्त और भगवान के बीच भाषा, जाति और वर्ण के जो रोड़े खड़े किये थे, उन्हें दूर हटाकर इन संतों ने सामान्य जन के लिए धर्म का मार्ग प्रशस्त किया। देश के इतिहास में धर्म के क्षेत्र में पहली बार जनतंत्र की स्थापना हुई। गुरु नानकदेव जी ने कर्म और बाणी से स्वयं के वजूद को पूरे मायने में साबित कर दिया। उनके संबंध में यह उक्ति पूरी तरह खरी उतरती है—

जब जब होत अरिष्ट अपारा।
तब तब देह धरत अवतारा।।

सचमुच गुरुनानकदेव जी के रूप में दिव्य चैतन्य का देहधारी साक्षात्कार हुआ था। गुरुओं की यह परम्परा जैसे—जैसे आगे विकसित हुई, बलिदानों और संघर्षों की प्रक्रिया क्रमशः तेज होती गई। नवें गुरु गुरु तेगवहादुर जी के शीषदान तक सिक्ख गुरुओं ने धर्म की रक्षा के लिए वलिदानों के कीर्तिमान स्थापित किये।

क्रांतिकारी अध्याय

दसवें गुरु गुरु गोविन्दसिंह जी के अवतरण के साथ सिक्ख परम्परा में एक नया क्रांतिकारी अध्याय शुरू होता है। धर्म को पुनर्जीवित करने तथा दुष्ट प्रवृत्तियों को जड़ों समेत नष्ट करने के लिए गुरु गोविन्दसिंह जी ने वर्णों में बंटे हिन्दू समाज को एक संगठन में पिरोया और खालसा—पंथ की स्थापना की। यहीं से धर्म की रक्षा के लिए सिक्खों का क्रांतिकारी व्यक्तित्व उभरा है। गुरु नानक देवजी की नैतिकता के साथ गुरु गोविन्द सिंह जी की वीरता समन्वित हुई। सिक्खों के शौर्य और शहीदी की गाथाओं का नया युग शुरू हुआ। आखिरकार विदेशी ताकतों के खिलाफ खालसा पंथ को विजय प्राप्त हुई। पंजाब में सिक्खों का राज्य स्थापित हुआ। गुरु गोविन्द सिंह जी के क्रांतिकारी नेतृत्व में न सिर्फ धार्मिक बल्कि सामाजिक पुनर्जागरण की प्रक्रिया भी शुरू हुई। गुरुजी के संघर्षकाल में परंपरागत धार्मिक मर्यादाएं नष्ट होती जा रही थीं। कर्म की जगह कर्मकांड को अहमियत प्राप्त हो रही थीं। लोग ऐश और इशरत के पीछे पड़े हुए थे। धार्मिक आनन्द को विकृत और फूहड़ रूपों में व्यक्त किया जाने लगा था। भारतीय त्यौहारों की मूल भावना की समाप्त होती जा रही थी। इसकी जगह विकृतियों को प्रदर्शित करने की प्रवृत्ति जोर पकड़ रही थी। देश में मनाये जाने वाले त्यौहार और पर्व विकृतियों को उगालन के माध्यम बन रहे थे। होली का पर्व इस दृष्टि से बहुत अधिक विकृत बन गया था।

होली का प्रयोजन

वैसे होली को लेकर कई पुराण कथाएं प्रचलित हैं। उनमें प्रह्लाद—मुक्ति की कथा विशेष रूप से मशहूर है। भक्त प्रह्लाद को उसके अधर्मी पिता हिरण्यकश्यप ने अपनी बहन होलिका के द्वारा जलाकर भस्म कर देने का आदेश दिया था, लेकिन परमात्मा की कृपा से होलिका की गोद में बैठा प्रह्लाद ज्वालाओं की बीच सुरक्षित रहा, पर होलिका जलकर भस्म हो गयी। प्रह्लाद की मुक्ति का आनन्द मनाने के लिए और दुष्टों के दमन की खुशी जाहिर करने के लिए होली मनाने की परम्परा चल पड़ी है। कृष्णावतार में सम्भवतः होली की यह परम्परा कृष्ण गोपियों के बीच भक्ति को व्यक्त करने का माध्यम बनी। कृष्ण भक्तों ने इसलिए गोपी—कृष्ण के प्रेम को रंगों के साथ जोड़ा है। होली खेलने तथा फाग रचाने के कई गीत कृष्ण भक्तों ने लिखे। दुर्भाग्य से भक्ति श्रृंगार की यह परम्परा जब विकृत होती गयी और रंगों की जगह कीचड़ आया, प्रेम की जगह कामुकता बढ़ी तो गुरु गोविन्द सिंह जी जैसे धर्मोद्धारक के लिए यह स्थिति असहनीय थी। उन्होंने होली के पर्व को फिर से उसी धार्मिक परम्परा से जोड़ा। उनके लिए तो होली भक्ति—श्रृंगार का प्रतीक थी। भक्त और भगवान के बीच भक्ति श्रृंगार को व्यक्त करने का वह एक सुअवसर था। इसीलिए कहते हैं—

आज हमारे बने फाग, प्रभु संगी मिल खेलने लाग।
होली कीनी संत सेव, रंग लागा अति लाल देव।।

कहते हैं, गुरु गोविन्द सिंह घोड़े पर बैठकर संतों के संग होली के पर्व पर गुलाल खेलते थे।

मूल्यों का पतन

गुरु गोविन्दसिंह जी के जीवनकाल में सुदृढ़ धार्मिक परम्पराओं का पुनरुजीवन होता रहा। लेकिन उनके पश्चात् धीरे—धीरे खालसा पंथ का क्रमशः पतन शुरू हुआ। गुरु के कर्तव्यों तथा सामान्य सिक्खों के बलिदानों के द्वारा मिली सत्ता को खालसा राज अपनी विलासी प्रवृत्तियों के कारण सुरक्षित नहीं रख सका। वास्तव में सत्ता के मद में चूर सिक्खा शाही के सामने कोई ऐसा गुरु नहीं था जो उन्हें सही राह दिखाता। इस स्थिति का लाभ धूर्त अंग्रेजी सत्ता कैसे नहीं उठाती। अंग्रेजों ने सिक्खों में ही फूट डालनी शुरू की, और

सिक्ख पंथ को हिन्दू धर्म से काटकर उसे अलग पहचान देने की साजिशों में वे काफी हद तक सफल भी हुए। सिक्खों का तो राज्य नष्ट हुआ ही सारे मुल्क पर अंग्रेजी सत्ता और विदेशी संस्कृति की पकड़ पक्की हो गयी।

संत खालसा : राष्ट्रवाद का आदर्श

इस बिन्दु से सिक्खों के इतिहास में नितान्त नया पर्व शुरू होता है। अंग्रेजी सत्ता के विरोध में स्वाधीनता आंदोलन की चिनगारियां कभी–कभी उठती और बुझ जाती। अंग्रेजियत की दमनकारी साजिशें सफल होती जा रही थी। यही वह बिंदु है जहां देश को स्वाधीनता बनाने के लिए महान बलिदानों की जरूरत महसूस की जाती है। सद्गुरु रामसिंह जी का उदय होना इस देश के स्वाधीनता आन्दोलन के लिए प्रेरणादायी घटना है। यह वह समय था जब सिक्खों का पतन हो ही रहा था। उस जमाने की दासता की ही हीन ग्रथि का शिकार बना–भारतीय समाज अपनी धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान भूल गया था। इस स्थिति का मार्मिक चित्रण ज्ञानी ज्ञान सिंह ने किया है। कहते हैं, भारतीय समाज पूरी तरह अपनी परम्परा को छोड़ चुका था। खानपान पहनावा आदि में तो अंग्रेजों का अनुकरण करना शुरू हो गया था। पर इससे खतरनाक हालत यह थी कि भारतीय समाज मानसिक स्तर पर अंग्रेजी संस्कृति और धर्म का गुलाम बन गया था। सिक्खी समाप्त हो गयी थी। असिक्खी का अधिकार बढ़ गया था।

सिक्खी दसमेस की सो की अपर देश की,
असिक्खी परी पेशगी छिनार वण ठनिके।।

सद्गुरु रामसिंह जी ने इस स्थिति को चुनौती के रूप में स्वीकार किया। धर्म और देश, भक्त और भगवान, व्यक्ति और समूह इन जोड़ियों को गुलाम देश को आजाद करने के लिए फिर से एकत्रित किया। संत खालसा की स्थापना की और नामधारी सिक्ख पंथ की नीव पड़ी। सद्गुरुजी ने फिर से गुरुनानक देव जी की परम्परा को जीवित किया। खान–पान, रहन सहन, आचरण कर्म इन सबमें शुद्धता और सादगी का प्रचार किया। राष्ट्रीय और धार्मिक मूल्यों को समन्वित करने की इतनी बड़ी मिसाल शायद ही संसार के किसी मुल्क में मिले। उस इतिहास को यहां दोहराने की जरूरत नहीं है कि सद्गुरु रामसिंह जी और उनके चलाये नामधारी सिक्ख पंथ का स्वाधीनता आंदोलन में क्या योगदान है। यह सर्वविदित है कि नेशनल कांग्रेस की स्थापना से पहले सद्गुरु रामसिंह जी ने अंग्रेजी सत्ता के विरोध में सम्पूर्ण असहयोग–टोटल बाईकॉट की घोषणा की थी और इसे पूरी तरह निभाया भी। देश प्रेम की ओर प्राचीन धार्मिक मर्यादाओं की रक्षा के लिए नामधारियों के बलिदान, इस देश की अस्मिता को सर्वोच्च मूल्य मानने वाले हर किसी नागरिक के लिए अभियान का विषय है।

सद्गुरु रामसिंह जी ने धर्म और समाज के क्षेत्र में अहिंसा का प्रचार किया और प्राचीन परम्पराओं को सामान्य जन के लिए सरल साध्य बनाया। गुरु नानक देव जी की धरती को नये संदर्भ में प्रस्तुत किया। गुरु नानक देव जी की नैतिकता तथा गुरु गोविन्द सिंह जी की वीरता को सद्गुरु रामसिंह जी ने अपने त्यागी, साहसी, सात्विक और अहिंसक व्यक्तित्व में रंगाकर प्रस्तुत किया। उनके नेतृत्व में धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्र में अहिंसक क्रांति की नयी प्रेरणा शुरू हुई। उसी परम्परा को सद्गुरु रामसिंह जी के उत्तराधिकारियों ने आगे बढ़ाया है, बढ़ा रहे हैं।

होला–नया रूप

नामधारी पंथ के जितने भी उत्सव और पर्व मनाये जाते हैं उन सबसे हवन, कीर्तन और लंगर तो होते ही हैं, पर इनके माध्यम से गुरु–भक्ति, नैतिकता, राष्ट्रीयता और सादगी के मूल्यों को प्रसारित किया जाता है। समाज सुधार, कृषि सुधार तथा संगीत के माध्यम से सांस्कृतिक उत्थान, बिना खर्च के सामूहिक विवाह–ये कुछ ऐसी मिसालें हैं। इनमें से हर एक पर स्वतंत्र रूप से लिखा जा सकता है। यहां हम सिर्फ होला पर्व के बारे में विशेष संकेत देना चाहेंगे।

धार्मिक कर्मकांडों और पाखंडों से जुड़ी रूढ़ियों के विकृत रूपों को मिटाकर उन्हें अपने मूल धार्मिक तथा नैतिक स्तर तक उठाने के प्रयासों का होला पर्व एक उत्कृष्ट उदाहरण है। गुरु गोविन्दसिंह जी ने अपने दशम ग्रंथ में अन्य अवतारों के साथ कृष्णावतार पर विस्तार से लिखा है। उन्होंने कृष्ण गोपियों के भक्ति–श्रृंगार और उनके बीच आध्यात्मिक प्रेम की तमन्यता को चित्रित किया है। कृष्ण के मथुरा से चले जाने के बाद गोपियों के विरह को लेकर कई कविताएं और छंद गुरुवाणी में मिलते हैं। उद्धव–गोपी संवादों के माध्यम से सगुण भक्ति का महत्व कृष्ण भक्तों ने प्रतिपादित किया है। गुरु गोविन्द सिंह जी ने भी इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए सगुण भक्तों की तरह जोग और निर्गुण की असारता को चित्रित किया है। कृष्ण के मथुरा से चले जाने के बाद बिरह पीड़ित गोपियां अपने पिया के मिलन के लिए तड़प रही हैं। उद्धव से वे कह रही हैं कि

त्याग गये ना ली सुध इनकी
होत कछु नन मोहे तिहारे।
संग रचै पुर वासन के इसनके सब
प्रेम बिदा कर डारै।
तातें न मान करों, फिर आवों
जीत तपैं तुम हौं हम हारो।
तौ तज मथुरा फिर आवो
सब गौअन के रखवारे।।

सर्गुण–निर्गुण की बीच, द्वैत–अद्वैत के बीच झगड़े का बड़ा मार्मिक चित्रण सूरदार आदि कृष्ण भक्तों में किया है। कृष्ण सखा उद्धव को गोपीयां बड़े आड़े हाथों लेती हैं और अपनी भोली परंतु सच्ची आस्था के बल पर जोग की असारता को साबित करती है। भ्रमर गीत की यह परम्परा गुरुवाणी में भी मिलती है। गोपियां उद्धव से कहती हैं–

जानि के अजान तुम कौह कहे उधो जी
जोग की जुगत से वियोगी क्या घट है।

श्याम के अस्तित्व में सराबोर गोपियां अपनी सुध–बुध बिसर

गई थी–

श्याम तन श्याम मन, शाम ही हमारो धन,
आठों धाम उधो हमें, श्याम ही से काम है।

इसी तरह के कई पद होला के पर्व पर कीर्तनों में गाये जाते हैं। गुरुद्वारों और दीवानों में होली का त्यौहार भक्ति श्रृंगार की आध्यात्मिक बाणी की गूंज में मनाया जाता है। यहां भौतिक स्तर पर न तो कोई रंग खेलता है और न गुलाल उड़ाता है। पर तन्नमयता और बेहोशी ऐसी छा जाती है कि सभी भक्ति के रंग में रंग जाते हैं।

भगवान के सगुण रूप का "चैतन्य" देहधारी गुरु के रूप में अवतरित होता है। भारतीय परम्परा का यह विश्वास गुरु और शिष्य के बीच आध्यात्मिक प्रेम को कृष्ण और गोपियों के प्रेम के स्तर तक उठा लेता है। सद्‌गुरु रामसिंह जी ने नामधारी सिख पंथ की स्थापना इसी उद्‌देश्य से की थी। उनका आदेश था कि प्राचीन नैतिकता तथा शाश्वत मानवता के मूल्यों को जहां भी गंदा और विकृत रूप प्राप्त होता है, उसका जी जान से विरोध करो। उनके बाद उन्हीं की परम्परा को विकसित करने में सत्‌गुरु हरिसिंह जी, सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी और विद्यमान सद्‌गुरु जगजीत सिंह जी ने महान योगदान दिये हैं।

विद्यमान सद्‌गुरु जगजीत सिंह जी के नेतृत्व में नामधारी सिक्ख पंथ धार्मिक मानवता की धरोहर को सुरक्षित तो रखे है पर साथ–साथ देश की कला और संस्कृति, कृषि और पेशु, धन मानव सेवा और राष्ट्र प्रेम इन मूल्यों को आग्रहपूर्वक प्रस्थापित करने में सक्रिय हैं। नामधारी कीर्तनों में रागी के मुखों से कृष्ण–लीला के पदों को सुनकर यही भाव मन में उठता है कि गोपियों के लिए निर्गुण ब्रह्म कृष्ण के रूप में जैसे सगुण बन गया था, वैसे ही दीवान में बैठे हर भक्त के लिए उनका गुरु उस अकाल पुरुष के चैतन्य का देहधारी रूप बन गया है।

(पेज 5 का शेष)

एक द्वार है जिसमें से हमको निकल जाना है, फिर इनमें नहीं आना। मुझे स्वामी जी से मिलकर बहुत खुशी हुई है। हम सब एक सड़क पर संसार में जा रहे हैं। बेशक सारी दुनिया हमारे साथ है, लेकिन जिनका निशाना एक है उनका सम्पर्क अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। हम सब मिलकर दुनियां का उद्धार करने के लिए एक साथ चलते रहे हैं। *सतगुरु कृपा करें, हम यह समझें हम कुछ नहीं कर रहे यह सब हमारे सतगुरु की कृपा से हो रहा है।*

कल हमारे दिवान में एक संगीत सभा हुई। पंडित रवि शंकर जी का नाम सब ने सुना है, वे भी हमारे पास आए। जो कुछ हमने सत्‌गुरु प्रतापसिंह जी की कृपा से सीखा उनको सुनायी, वे कहने लगे आप बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। मैने कहा–सत्‌गुरु जी हमसे करवा रहे हैं।

सबसे बड़ी यात है, अपने गुरु से मंत्र ले कर, उस विधि से जाप करना जो विधि है, उससे हमारा पार उतारा हो सकता है। गुरुवाणी में लिखा है–

जिस नामु रिदै सोई बड़ राजा।।
जिसु नामु रिदै तिसु पूरे काजा।।
जिस नामु रिदै तिनि कोटि धन पाए।।
नाम बिना जनमु बिरथा जाए।।
मैं यही कह कर आपसे आज्ञा लूंगा।।

–: विज्ञापन दरें :–

वार्षिक शुल्क	100 रुपये
पांच वर्ष	450 रुपये
आजीवन	1000 रुपये

विदेश– U.K. & Other

One Year	20 Pound
Ten Years	100 Pound
U.S. A. & Other	
One Year	40 Doller
Ten Years	200 Doller

ADVERTISEMENTS TARIFF

Main Back Title Title Page	Rs. 5000/-
Second Title Page	Rs. 4000/-
Full Page	Rs. 2000/-
Half Page	Rs. 1200/-

बीबी जांगीर कौर जी (अध्यक्ष)

कुछ दिन पूर्व मैंने अखबार पंजाब केसरी में आपका एक बयान पढ़ा जिसमें आपने आदि ग्रंथ को अन्य भारतीय भाषाओं में छापने से मना किया है—मैं आपसे पूछता हूं—

➡क्या यह ग्रन्थ केवल सिक्खों का है—संतों का उदपेश तो पूरी मानव जाति के लिए होता है—गुरु जी कहते हैं "उपदेश चहूं वर्णों को सांझा।

➡आदि ग्रन्थ की वाणी इकठ्ठा करने के लिए गुरु अर्जुन देव जी को बहुत मेहनत करनी पड़ी।

➡गुरुनानक देव जी ने अपनी रची बाणी, कबीर साहिब, संत रविदास भगत सैन और फरीद साहिब की बाणी जो उन्होंने शेख इब्राहीम (बाबा फरीद की 12वीं पीढ़ी) से ली थी। गुरु अंगद देव जी को सौंप दी।

➡सभी रब्द अभ्यासी पूरे संत जिनकी रसाई सच्चाई तक होती है। अपने आपको किसी धर्म विशेष से बांधकर नहीं रखते—पर फिर भी हमारे गुरु हिन्दु जामें में आए और उनके परिवार रिश्तेदार सभी हिन्दू थे।

➡अगर आप उन्हें केवल सिखों के गुरु ही मानें तो आदि ग्रंथ में केवल 6 गुरुओं की बाणी है। इसलिए बाकी संतों पर और उनकी बाणी पर तो आपका कोई अधिकार नहीं—जब उनके उत्तराधिकारियों ने उनकी बाणी गुरुनानक देव जी या गुरु अर्जुनदेव जी को दी थी तो क्या उन्होंने कोई लिखित में दिया था—All Rights Reserved with Future Sikh S.G.P.C.

➡अगर गुरु अर्जुनदेव जी को जरा भी आभास होता कि आने वाले समय में यह........... इस ग्रंथ को एक व्यापार का जरिया बना लेंगे, तो वह कभी भी इसका सम्पादन न करते—पंचम पातिशाह तो संस्कृत, फारसी और संगीत के विद्वान थे पर आप लोगों की बुद्धि भ्रष्ट हो चुकी है कि आप संस्कृत को हिन्दुओं से जोड़कर इसका विरोध करते हैं—हर मनुष्य के अंदर 52 कमल हैं और उन पर 52 संस्कृत के शब्द लिखे हैं, इसलिए इसे देवभाषा कहते हैं—कबीर जी कहते हैं—बावन अक्षर लोक त्रै इन्हीं माह—ए अखर खिरि जाहिंगे ओम अखर इनमें नाहिं (पन्ना 340) गुरु अर्जुन देव जी ने 52 अखरी इसीलिए लिखी हैं, जबकि गुरमुखी लिपि की वर्णमाला में केवल 34 अखर हैं।

➡रही बात ग्रंथ को गुरु मानने की तो गुरु गोविन्द सिंह जी ने अपने धाम जाने से पहले कभी नहीं कहा कि "आज्ञा भई अकाल की तभी चला था पंथ, सब सिखन को हुकम है। गुरु भाषियों ग्रन्थ—यह शब्द पंडित प्रह्लाद सिंह के हैं। गुरु जी कहते हैं जुग—जुग सरकार बणाई है,—अगर अकाल पुरख ने ऐसी आज्ञा देनी होती तो आदि ग्रन्थ की रचना के बाद साहिब श्री गुरु अर्जुनदेव जी को देते ताकि आगे से ग्रन्थ ही गुरु हो जाता बाकी के भी 5 गुरुओं का अकाल पुरुष न भेजता क्योंकि इस मृत्युलोक में संत तो भूत पलीत का चोला धारण करके अपने शरीर पर भारी कष्ट उठा करके एवं जीवों के कल्याण के लिए ही आते हैं।

➡गुरु अर्जुन देव जी और गुरु गोबिन्द सिंह जी हमें किसी भी जड़ वस्तु की पूजा का हुक्म नहीं देते—उनकी वाणी का अंश आपके लिए भेज रहा हूं।

➡आपने जगह—जगह गुरुद्वारे बनाकर इस महान ग्रन्थ के काम पर अरबों रुपये इकट्ठा करते हैं, जिसका 50 प्रतिशत हिन्दू देते हैं और फिर भी आप हिन्दुओं का उपहास उड़ाते हैं और बुतप्रस्त कहते हैं और विप्र कहते हैं।

➡आप राम और कृष्ण से नफरत करते हैं, जबकि गुरु

किसी गुमनाम गुरुनानक नाम लेवा हिन्दू ने यह पत्र पूर्व वर्ष शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की अध्यक्षा बीबी जागीर कौर को लिखा था, जिसका अभी तक शिरोमणि कमेटी व वर्तमान अध्यक्ष ने कोई उत्तर नहीं दिया, जबकि गुरुनानक देव जी का सिद्धांत है कि रोष न की जै। उत्तर दी जै।

पाठकों की जानकारी हेतु यह पत्र प्रकाशित कर रहे हैं। पाठकगण अपने विचार खुलकर हमें भेजें हम उन्हें प्रकाशित करेंगे।

सम्पादक

"मेहनत एक सुनहरी चाबी है जो किस्मत के ताले को खोल देती है।"

—संत हरबंश सिंह मठारू

रामदास जी अपनी वाणी में कहते हैं–

कृषन बल भद्र गुरु पग लगि धिआवै।
नानक गुरुमुखि हरि आप तरावै।

(पन्ना 165)

➪आप अरदास में 10 गुरुओं की देय कहते हो जबकि बाणी केवल 6 गुरुओं की है–बाकी संत जिनकी बाणी इस पवित्र ग्रंथ में हैं। उनका नाम कभी अरदास में नहीं लेते–क्योंकि आपको गुरु की गोलक में उन सभी की बदौलत अपार माया मिलती है तो उसका कुछ हिस्सा तो उन संतों और भगतों के वर्तमान संस्थानों और उत्तराधिकारियों को भी जाना चाहिए।

➪बहन जी अगर 5 प्रतीकों से कोई "सिख" बन जाए तो इससे सस्ता फायदा और क्या हो सकता है। गुरु गोबिन्द सिंह जी कहतें हैं।

जगत जोत जपै निस बासुर
पूरन जोत जगै घर में तब खालस ताहि खालस जानै।

गुरु तेगबहादुर जी कहते हैं–
मन रे गहिओ न गुर उपदेस
कहा, भईयों जउ मूंड मुंडाओ
भगवऊ कीनों वेष–(पन्ना 633)

अगरा यह वाणी हिन्दू सन्यासियों पर लागू होती है तो आज के सिखों पर क्यों नहीं लागू होती, चाहे मूंड मुनवा लो चाहे लम्बे बाल रख लो उससे रूहानियत पर क्या फर्क पड़ता है–क्या केवल बाल और पगड़ी धारण करने से अकाल पुरुख केवल 2 करोड़ सिखों को सच्चखंड भेज देगा और बाकी 7–8 अखा जो जीव हैं उन्हें नर्क में भेजेगा।

भाई गुरुदास क्या कहते हैं–
बेद गिरंथ गुरु हरि है जिस लगि भवजल पारि उतार।
सतगुरु बाझ न बुझिए जिंचर धरे न प्रभ अवतारा

आपसे प्रार्थना कि कम से कम जो उपदेश संत सतगुरुओं ने अपने अभ्यास के द्वारा जो उन्होंने उपरी रुहानी मंडलों में नजारा देख जो वाणी (जैसे में आवे खसम की बाणी) मानव मात्र के कल्याण के अमल करने के लिए रची। उसे मत रोकिए। उसकी खुश्बू सब भाषाओं में फैलने देंगे। आप ग्रन्थ को ग्ररु मानें, आपको मुबारक, क्योंकि हर जीव ने अपने कल्याण का रास्ता स्वयं चुनना है।

अपने जीव पर दया कुछ पा लो। 84 का फेर बचा लो
संत न होते जगत में, जल मरता संसार

संत सतगुरु हमेशा आते रहेंगे, कभी पीढ़ी बंद नहीं होगी। गुरु अर्जुनदेव जी और गुरु गोविन्दसिंह हमें मूर्तिपूजा से रोकते हैं, हालांकि भगवान की मूर्तियों को परमात्मा द्वारा बनाये मनुष्य के रूप पर आधारित बहुत ही सुन्दर और देखने को मन को छू जाती हैं और हम सोचते हैं कि हमारा हरि प्रभु भी ऐसा ही सुन्दर होगा, जैसे कि यह भगवान की मूर्ति क्यों उसमें जीव नहीं, इसलिए हमें रोकते हैं। गुरु गोविन्द सिंह कहते हैं कि "जो जिय होत तौ देत कछु ताहिं" इसे हमें उनका संदेश मिलता है। किसी जड़ नहीं, हमें केवल चेतन की ही पूजा करनी चाहिए। उनका अगर यह हुक्म है तो गुरु साहिब हमें ग्रन्थ (जड़) को जो कागज और स्याही से निर्मित है को गुरु मानने की आज्ञा कैसे दे सकते हैं, इसलिए–

गुरुदेव हमरा सद बोलंता
चेतन ही चेतन को चेतन से मिलवंता
गुरु अर्जुनदेव जी फरमाते हैं,
बाप हमारा सद चिरंजीवी
भाई हमारे सद ही जीवी
मीत हमारे सदा अभिनासी
कुटुंब हमारा निज करवासी

(पन्ना 1141)

रागदेवगंधारी पातिशाही ।।10।।
इक विन दूसर सो न चिनार। भंजन
गड़न रामरथ सदा प्रभ जानत है करतार।1
कहा भइयो जो अति हित चित कर बहुविधि सिला पुजाई।।
पान थके पाहिन कह परसत कछु कर सिद्ध न आई।।
अच्छत धूप दीप अरपत है पाहन कछू न खैहै।।
ता मैं कहां सिद्ध है रे, जड़ तोहि कछू।।
वर दैहे जौ जिय होत तौ देत
कछू तुहि कर मन बच करम विचार
केवल एक शरणि सुआमी विन यौ
नहीं कतहि उधार।।33।। ।।9।।
जो पाथर को कहते देव। ता की विरधा होवै सेव।
जो पाथर की पांई पाय। तिसकी घाल अजांई जाय।
ठाकुर हमरा सद बोलता। सरब जीआ कौ प्रभ दान देता।

अंतर देओ न जाने अंध। भ्रम का मोह या पावै फंध।
न पाथर बोलै ना किछ देय। फोकट करम निहफल है सेव।
जे मिरतक कौ चंदन चढ़ावै। उस ते कहो कवन फल पावै।
जे मिरतक कौ बिसटा मांहि रुलाई। तां मिरतक का क्या घट जाई कहा,
भईयों जउ मूंड मुंडाओ
भगवऊ कीनों वेष–(पन्ना 633)

अगरा यह वाणी हिन्दू सन्यासियों पर लागू होती है तो आज के सिखों पर क्यों नहीं लागू होती, चाहे मूंड मुनवा लो चाहे लम्बे बाल रख लो उससे रूहानियत पर क्या फर्क पड़ता है–क्या केवल बाल और पगड़ी धारण करने से अकाल पुरुख केवल 2 करोड़ सिखों को सच्चखंड भेज देगा और बाकी 7–8 अखा जो जीव हैं उन्हें नर्क में भेजेगा।

भाई गुरुदास क्या कहते हैं–

बेद गिरंथ गुरु हरि है
जिस लगि भवजल पारि उतार।
सतगुरु बाझ न बुझिए
जिंचर धरे न प्रभ अवतारा

आपसे प्रार्थना कि कम से कम जो उपदेश संत सत्गुरुओं ने अपने अभ्यास के द्वारा जो उन्होंने उपरी रुहानी मंडलों में नजारा देख जो वाणी (जैसे में आवे खसम की बाणी) मानव मात्र के कल्याण के अमल करने के लिए रची। उसे मत रोकिए। उसकी खुश्बू सब भाषाओं में फैलने देंगे। आप ग्रन्थ को ग्ररु मानें, आपको मुबारक, क्योंकि हर जीव ने अपने कल्याण का रास्ता स्वयं चुनना है।

अपने जीव पर दया कुछ पा लो। 84 का फेर बचा लो
संत न होते जगत में, जल मरता संसार
संत सतगुरु हमेशा आते रहेंगे, कभी पीढ़ी बंद नहीं होगी।

गुरुमुखी लिपि में उपलब्ध हिंदी वीर काव्य

पंजाब की भाषा पंजाबी व इसकी लिपि गुरुमुखी है। यहां पंजाबी के अतिरिक्त समसामयिक परिस्थितियों के अनुकूल ब्रजभाषा में साहित्य सृजन हुआ। उसकी भी लिपि प्रायः गुरुमुखी ही है। यह साहित्य भी रीति, भक्ति तथा वीर काव्य के रूप में उपलब्ध होता है। यहां का वीर-साहित्य मुख्यतः दो रूपों में मिलता है-वीर साहित्य तथा जंगनामा साहित्य। संभवतः 'वार' संस्कृत के वरण (वृ-णिव-ल्युद) का ही रूपांतरण है, जिसका अर्थ है रोक, रुकावट, अड़चन, सामना, बचाव, रक्षा आदि। ऐसा प्रतीत होता है कि वारण शब्द का सम्बन्ध रक्षा या सामना करने से संबंधित होने के कारण उससे व्युत्पत वार शब्द युद्ध या युद्ध वर्णन के अर्थ में रूढ़ हो गया।[4] व्युत्पत्तिरक अर्थ 'वार' शब्द का आरंभ व्रि (संस्कृत) धातु से है।[5] जिससे 'वारी' (बारी), वेरी (शत्रु) अर्थात् वार (प्रहार करना) अथवा रोकना (वाहर) किसी दूसरे पर आक्रमण करने अथवा पहले हो चुके आक्रमण को रोकने के लिए जमा हुआ इकट्ठा एवं बाहरी अथवा वाहर शब्द से है।

पंजाबी-हिंदी कोश में वार निम्न अर्थ दिये हैं-

आक्रमण, चोट, दोष लगाने का भाव, काव्य-रचना का एक रूप जिसमें शूरवीरता का वर्णन होता है, वीर-काव्य।[6] प्यारा सिंह पद्य ने 'वार' शब्द मूल 'वार्ता' शब्द से लिया है।[7] चरण सिंह के मतानुसार-"शूरवीरों के युद्धों के वर्णन उसके यशोगान में रखकर लोग गायन करते थे, उसको वार कहा जाता था। वार के छंद को पउड़ी कहते हैं।[8]

डॉ. जग्गी के शब्दों में -"नायक की प्रशंसामयी वह 'वार्ता' जो किसी आक्रमण या मुठभेड़ का वर्णन करके पाठकों एवं श्रोताओं को उत्साहित करे एवं पराक्रम करने के लिए प्रेरणा दें।9 यह मुठभेड़ का स्थूल रूप होता है और आध्यात्मिक वारों में यह संघर्ष भावनाओं के बीच होकर अंतमुखी हो जाता है।

अंतः 'वार' से हमारा अभिप्राय उस काव्य रूप से है, जिसमें सूक्ष्म एवं स्थूल संघर्ष वर्णित हो तथा श्रोताओं व पाठकों को उत्साहित कर नयी चेतना का संचार कर समसामयिक संघर्ष का सामना करने के लिए कार्यरत होने का प्रेरक हो। पउड़ियों में वर्णित युद्ध-कथा को वार कहते हैं। प्यारासिंह पद्य इस बात को दृढ़ करवाते हैं कि 'वार' गुरुमुखी लिपि में लिखित वीर रस का परिपूर्ण वह काव्य रूप है, जो पउड़ियों में रचित है। वार व पउड़ी का अविभाज्य संबंध है। यशोदा नंदन कृत 'लव कुश की वार' के अंत में लऊ कुछु की पउड़िया सम्पूर्ण' से भी यह बात स्पष्ट हो जाती है। अतः पउड़ी को वार के लिए अनिवार्य समझा जाता है। हिंदी के कवि वृंद ने भी राजा रूपसिंह की वार्ता में नीछानी छंद का शीर्षक दिया है। पंजाबी वार-'रचना के लिए भी 'निशानी छंद प्रयुक्त हो गया था। केशवदास कृत राजा अमर सिंह की वार में पउड़ी के स्थान पर इस वार छंद का प्रयोग हुआ है।10 सिक्ख गुरुओं तथा भाई गुरुदास ने आध्यात्मिक वार साहित्य के लिए पउड़ी छंद का प्रयोग किया है। इसी संदर्भ में दसम गुरु कृत 'चंडी दी वार' में भी दुर्गा पाठ बणाइआ सभे पउडिया'11 उल्लेखनीय है। वार पउड़ी में लिखा जाता है और पउड़ी के लिए निशानी छंद या सिरखंडी छंद प्रयुक्त किया जाता है। अतः वार केवल पउड़ी छंद में ही हो सकती है।

गुरु अर्जुनदेव जी ने पउड़ियों के साथ श्लोकों को भी सम्मलित किया है। परंतु प्रमुखता पउड़ियों की ही रही। श्लोक केवल भाव स्पष्टीकण एवं व्याख्या हेतु आए हैं। श्लोक वारा ते वधीक से भी यही अभिप्राय है कि श्लोक गौण है तथा पउड़ी अनिवार्य।

काव्य में वेंत लंबी बहर का छंद है। इसे ललकार के साथ नहीं गाया जा सकता। दोहा में भी उत्साह में एवं लय नहीं होती। शौर्य गान के लिए इसका पउड़ी जैसा महत्व नहीं है। पउड़ी में पंक्ति छोटी-पंक्ति छोटी वडी मात्राओं के कम या अधिक होने से इसकी लय में कोई परिवर्तन नहीं आता।

(क) छट पई छर नामी, दलां मुकाबला।[12]

(ख) इक वडे तेगी तड़फीअन मद पीते लोटन बावले।[13]

पउड़ी का यह बहुत आयामी स्वरूप युद्ध वर्णन के लिए उपयुक्त है। पउड़ी किसी छंद का नाम नहीं है। इस बछर में कई प्रकार के छंद हो सकते हैं। इसमें अधिकतर नीछाणी छंद का प्रयोग होता ही रहा है। कुछेक पग जोड़ने से पउड़ी का निर्माण होता है और पउड़ियों के योग से वार निर्मित होकर वीरता की ऊंची अटालिका को स्पर्श करने योग्य होती है।

वार काव्य-रूप के भव एवं शब्द वीर योद्धा के दमदग करते चेहरे के अनुरूप ही प्रज्जवलित होने चाहिए। वीर ह्रदयों में शौर्य का संचार करने में सक्षम तथा इनसे कायर ह्रदय दहकने लगते हैं।

हुई नदियां व मांस को निकालने वाले भूत-प्रेत, कौवे, कुत्त इत्यादि मांसाहारी जानवरों पारस्परिक किलकारियां, कायरों का भागना, वीरों की विजय गूंज से परिपूर्ण आक्रमण आदि का सजीव चित्रण वार को जीवित युद्ध-भूमि में परिवर्तित कर देता है। कवि में चित्रित करने का सामर्थ्य होना चाहिए। क्रमशः

सत्गुरु रामसिंह जी

यह चित्र है धर्म सेनानी का,
सत्गुरु रामसिंह लासानी का।

माँ 'सदा कौर' की दिव्य ज्योति–
पिता 'जस्सा सिंह' के प्राण थे जो
थे पंचनद–पंचवटी गौरव–
भारत माता की शान थे जो।
निराकार निरंजन की ज्योति–
साकार रूप कुर्बानी के,
कल्पान्त तलक होंगे गुंजित–
स्वर जिनकी ओजस्वी बाणी के।

अक्षय है जिनका हर अक्षर–
महाकोष अनश्वर भक्ति का,
जिनकी माला के मनको नें–
लहराया सिन्धु शक्ति का।
भौतिक शरीर में दिव्य ज्योति–
अपने युग के युग–द्रष्टा थे,
थे सदस्य हृदय और उच्चाशय–
जो पुरुषोत्तम युग–स्रष्टा थे।

पारस समान जिनकी पद–रज–
लोहे को कंचन करती थी,
हिम–शीत हृदयों में ज्वाला भर–
बज्रांग तुल्य बल भरत थी।
थे जिसके मनके अंगारे,
या शांन्ति क्रान्ति का मधुर मिलन–
जलधर में विद्युत के बारे।

निश्चिय जिनके उर अन्तर में–
दशमेश पिता का निहित अंश,
था भय कम्पित गोरा शासन–
घनश्याम से जैसे भीत कंस।
जिनके मस्ताने अनुयाई–
थे सत्यधर्म के दीवाने,
जो रखकर शीश हथेली पर–
बने शमां–धर्म के परवाने।

जिन्होंने आजादी की खातिर–
सर्वस्व सहर्ष बलिदान किया,
जिन्होंने ही ईश्वर आज्ञा का–
था आजीवन सम्मान किया।
जब इन्हें इनके बहनोई ने–
जकड़ा था तोप जंजीरों से,
हुआ अन्त उनके बहनोई का–
उसी तोप की ही जंजीरों से।

सेना में भरती होकर भी–
जो सच्चे सन्त सिपाही थे,
जिनकी पद–रज के मस्ताने–
सेना में असंख्य सिपाही थे।
रहकर भव सिन्धु में जिनको–
छू सकी न भव की आसक्ति,
भक्ति ही थी जिनकी शक्ति–
शक्ति ही थी जिनकी भक्ति।
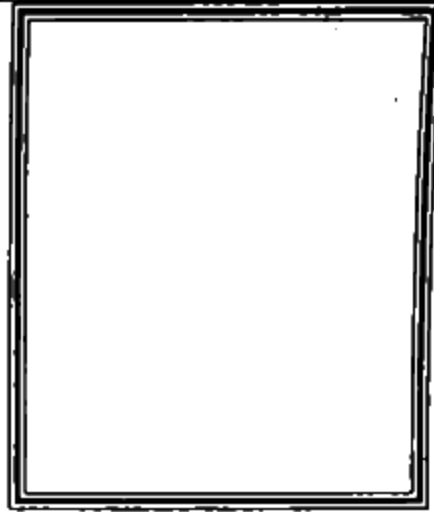
लख गोकुल पर दारुण संकट–
कोमल उर जिनका तड़प उठा,
अगणित कुर्बानियां देकर भी–
की इन्होंने गोकुल की रक्षा।
पी पी दिनकर की अरुणाई–
रहे नीरज सम जगती सर में,
रही जिनकी आलोकित शक्ति
शीतल निर्मल भक्ति सर में।

भक्ति शक्ति का संगम थे–
नर रूप में जो नारायण थे,
श्रम–कण वन चमक रहे जिनके
सभी तारे विशद नीलाम्बर के।
जिनके जय घोष ने क्षण में ही
मुख मोड़ दिये शमशीरों के
हुआ पाणि–ग्रहण बल बुद्धि का
भुज दण्ड फड़के वर वीरों के।

जिन चरणों में हिमगिरि झुके
नभगंगा भी स्थिर रह न सकी,
भयभीत पवन के प्राण रुके
वीणा–पाणि कुछ कह न सकी।
शाति के अभिनव आंगन में
क्रान्ति की ज्वाला भड़क उठी,
जलधर के सीने में मानो
चंचल चपला थी कड़क उठी।

समदर्शी सत्गुरु ने जग को
था समता का सन्देश दिया
फिर जीते जी मर मिटने का
निज शिष्यों को आदेश दिया
शुचि मानस में प्रतिबिम्बित हो
निराकार स्वयं साकार बने,
शुद्ध प्रेम में ही प्रभु के दर्शन–
पावन मन मोक्ष के द्वार बने।

मिट चुके खालसा शासन के
जिन्होंने स्वप्न साकार किए,
तन्द्रा–तन्द्रित शार्दूल जगा–
हिम बिन्दु ज्वलित अंगार किए।
कहा 'परम पुरुष की सन्तति तुम–
यह भेद भाव अन्तर कैसा?
मानव मानव हैं सभी एक
समझो सबको अपने जैसा।

यदि परम पिता को पाना है–
दीनों दुखियों के कष्ट हरो,
दुष्कर्मों से नाता तोड़ो
निश्चछल मन से शुभ कर्म करो
आया न कभी जिनके मन में
भूले से भी दुर्भाव कभी,
की सदा ही जन–जन की सेवा
दुखियों के हरे सन्ताप सभी।

सैनिक बनकर भी रहे सदा
जो प्रभु भक्ति में ध्यान लीन
वेतन वृत्ति तज आजीवन
व्यवसायी बने रह स्वाधीन
जिन्होंने धन–पद–लिप्सा से
कभी तजा न निज आदर्शों को
हिमगिरि सम दृढ़ रह निज प्रण पर
दिया निकट न आने गोरों को।

जो अंग्रेजों के शासन में
रहना भी पाप समझते थे,
भारत जननी की उन्नति में–
इक बन्धन श्राप समझते थे
जिनके कर कमलों में माला–
तन पर था चोला खादी का,
जिन्होंने देश में सर्व प्रथम
फूंका था नाद आजादी का।

जो निज जीवन का मोह त्याग
थे कर्म–क्षेत्र में कूद पड़े,
अंग–अंग कट जाने पर भी थे
जिनके शिष्य अविचल रहे खड़े
जिनके सैनिक निर्भय रण में
रख शीश हथेली पर जूझे,
जिन्हें देश धर्म की रक्षा बिन–
कोई कर्म न जीवन में सूझे।

बने प्रहरी भारत मुक्ति के–
जिनके अनुयाई मस्ताने
स्वदेश धर्म की रक्षा हित–
बने शमा–वतन के परवाने।
जब सिक्ख राज्यों के नीच भूप–
जूझे टुकड़ों पर पलते थे,
बन देश द्रोही ये अधम नीच
गोरों का पानी भरते थे।

सरदार बहादुर बन बनकर
की प्राप्त गोरों से जागीरें,
बन देश द्रोही दासता की
की और अधिक दृढ़ जंजीरें।
बन बन शुभ चिन्तक गोरों के
दिया साथ था सिंह सभाओं ने,
शासन की सुरा, सुन्दरी के
वश होकर बेवफाओं ने।

जब सिंह सभाएं नत मस्तक
गोरों की सलामी भरती थीं
तज दशम पिता की मर्यादा
शासन की गुलामी करती थी
थे सिंह सभाओं के सदस्य
गुरु सिद्धांतों को त्याग रहे,
उस समय भी कूके सिंह समान–
थे खेल मृत्यु से फाग रहे।

उस समय भी निर्भय कूकों ने
था गोरों का बहिष्कार किया,
गोरा –शाही आदेशों को
था मानने से इंकार किया
सबसे पहले जिनके मन में
बहिष्कार नीति के भाव जगे,
इस शान्तमयी आन्दोलन से
शासक पर शत–शत घाव लगे।

तजकर लिप्सा धन और पद की
लिया तोड़ था गोरों से सम्बन्ध
न्यायालय किए अपने स्थापित
किया डाक तार का भी प्रबन्ध
वस्त्रादि विदेशी फूंक दिये
तन पर पहनी सबने खादी
राजाज्ञा उल्लंघन करके
बढ़े वीर लेने को आजादी।
आंगल–शिक्षा–शालाओं को
किया दूर से ही प्रणाम,
जितने थे उपकरण विदेशी
लिया न भूले से भी नाम
ईश्वर भक्ति के संग संग जो
सच्चे देश पुजारी थे
चाहे परिवार सहित उनको
पड़े सहने संकट भारी थे।

दशमेश पिता गुरु गोविन्द के
कूके कट्टर अनुयाई थे
शत्रु थे गोरा–शाही थे
उन शूर वीर रणधीरों ने
सहर्ष शीश पर घाव सहे,
किन्तु जिनके अन्तर्घट में
भरे अमर मृत्यु के चाव रहे।

जिन्होंने विशुद्ध निर्मल मन से
किये सदा ही पावन विमल कर्म
किया पुनः जीवित इस सृष्टि में
था सत्य–सनातन आर्य धर्म
सत्गुरु–पद–चिन्हों पर चल कर
निज तन मन धन कुर्बान किया,
निज देश 'महेश' समझ अपना
दिये प्राण, न पर सम्मान दिया।

सर्वस्व लुटाया धर्म हेतु
थी उठी हृदय में हूक ऐसी
बनी तभी तो अनुयाई कूका
की मुखरित क्रान्ति की कूक ऐसी।
मुक्ति आन्दोलन में कूदे
जिनके शिष्य तज कर प्राण–मोह
बन गया गोरों की दृष्टि में
फिर देश–प्रेम कूका विद्रोह।

विचलित न हुए तूफानों से
अपनाया क्रान्ति का सम्बल
अति संकटमयी परिस्थितियों में
जी रहे हिमालय सम अविचल।
बढ़े जिधर भी, गोरों के द्वारा
था इनका प्रबल विरोध हुआ
पड़ भट्ठी में कुन्दन बनने–
का था कंचन को बोध हुआ।
फिर जिनका जोश शौक कुर्बानी
मृत्यु भी मद्धिम कर न सकी
शासन की दुःसह दमन नीति
बिल्कुल ही साहस हर न सकी
जिस ओर बढ़े ले धर्म–ध्वजा
थी विजय श्री संग संग चली

चरणों में नत मस्तक होकर
थे झुके विश्व के महा बली।

घोर विकट संकट वेला में
कभी नहीं घबराए जो,
शांतिमयी नूतन कान्ति का
सन्देश धरा पर लाए जो
थी जिनकी ममता समता से–
थे प्रेम अहिंसा के सिन्धु
परातन्त्रय–निशा का तम हरने
नभ पर चमके बन नव इन्दु।
निज कर में धर्म ध्वजा थामे
जब निकल पड़े थे सृष्टि में,
पलकों में प्यार की मस्ती थी
और सौम्य सुधा थी दृष्टि में
पी पी सहर्ष विष प्यालों को
मर मर जीना सिखलाया था
जय घोष गुंजा आजादी का–
मुक्ति का रस सरसाया था।

पावन प्रकाश का दीपक ले–
था दूर पाप अन्धकार किया,
ऋतु–राज देश पर राज्य करे
था पतझड़ का संहार किया
जो कभी न विचलित हो पाए
बस चुके जो प्राण–स्पन्दन बन
भारत जनता के प्राणों में।

जन–जन को विस्मित किया, तोड़–
बंधन की कड़ियां फौलादी
जो रक्त हीन कान्ति द्वारा
चाहते थे लाना आजादी
जिनके बलिदानों को गाथा–
'कोटले' का रकड़ गाता है।
शेरपुर दुर्ग का इक–इक कण–
कीर्ति को अमर बनाता है।
"रब्बो का कूप" मलोद किला"
मुक्ति की कथा सुनाता है,
रामबाण का बूढ़ा वट तरुवर
श्रद्धा से शीश झुकाता है
पुनः रायकोट का फांसी स्थल
अमरत्व के जाम पिलाता है
प्रयाग धरा का हर जर्रा
बलिदान का पाठ पढ़ाता है।

गोरा शासन की नीव हिली
जब शिव ने दृग–विक्षेप किया
तज मान सरोवर हंसों ने
शोणित सागर में स्नान किया
इस सन्त सिपाही ने ऐसे
बरसाए विप्लव अंगारे
कांपे सब गोरे हत्यारे

होता था जिनके अधरों से
सदा मुखरण सत्य विचारों का
किया चित्रित प्यारे भारत में
फिर चित्रण अमर बहारों का।
गोरों के बंदी गृह में रह–
थे देश धर्म के मतवाले,
रहे सदा बांटते अमृत ही–
पी काल कूट भर–भर प्याले।

भड़की थी जिन के अन्तर में–
तम–नाशक क्रान्ति की ज्वाला,
था जिन्होंने देश की रक्षा हित–
सब कुछ ही भेंट चढ़ा डाला।
प्रतिमा पूजन से छुड़वाकर
वहमों से देश बचाया था,
जाति की डूबती नैया को–
बन नाविक पार लगाया था।

जिन्होंने तूफान लहरों पर
नव साहिल का निर्माण किया
जिन्होंने सहर्ष निज जीवन का
भारत जननी को दान दिया।
भूचाल भी थर–थर कंपित थे
सुन सुन जिन की ललकारों को
ली टक्कर थी निर्भयता से
नभतल चुम्बी कोहसारों से
सुन सुनकर जिनका सिंह–नाद
पंचनाद की धरती जाग उठी
कण–कण से यौवन फूट पड़ा
हर रस्सी बनकर नाग उठी।
जिनके बलिदान की गाथाएं
गाता है राम का बाग अभी,
जिनके तन रक्त से कूको का–
जलता अविराम चिराग अभी।

मुख मोड़ दिये थे तोपों के–
जिनके निर्भय अनुयाइयों ने,
तोपों के गोलों का स्वागत–
था किया सहर्ष शैदाइयों ने।

जिन्होंने देश के कण–कण में–
नव जीवन का संचार किया,
जिन्होंने मतवाले भाले से–
था गोकुल का उद्धार किया।

था सदा सहायक 'वाहिगुरु'–
जिनकर रण के मैदानों में,
जूझे हिमगिरी सम अविचल बन–
जो प्रलयंकर तूफानों में।
कायर अन्यायी गोरों ने–
जिन्हें दे दिया देश निकाला था
मानो अपने ही हाथों से–
किया अपना ही मुंह काला था।

पुनः जिस प्रवासी की आज्ञा ने–
दिया "बुद्ध सिंह हरि सिंह" बना,
मानों जिनकी सद्बुद्धि ने–
था दो शेरों को जन्म दिया।
जिनके नेतृत्व में और अधिक
कूका आन्दोलन खूब फला,
प्रज्वलित हुई वह अमर ज्योति–
गोरों का दिनकर डूब चला।

किए विकसित सुर्भित सुमन नए–
पचनद उपवन का बन माली,
'भैणी साहिब' की अमर कथा–
निज रक्त से अपने लिख डालो।
मुख पर गौरव की लाली है–
ग्रीवा में सिमरण माला है,
निर्भय 'चीनी' पर चढ़ा हुआ–
यह सैनिक सन्त निराला है।
जिसकी ओजस्वी गाथाएं–
भैणी की धरती गाती है,
सहर्ष सदा जिन चरणों पर–
मुक्ति भी शीश झुकाती है
गागर में सागर समा गया–
सो गई शेष की फुंकारें,
शिव में ताण्डव के प्राण जगे–
बन गए तिनके भी तलवारें।

पूनम के चन्दा को लखकर–
सागर की लहरें तड़प उठीं,
बनी मौत ग्रास वर वीरों का–
जीवन की ज्वाला भड़क उठी।
इन्होंने ही सच्चे मन से
गुन–गान किया गुरबाणी का,
यह चित्र है धर्म सेनानी का–
सतगुरु राम सिंह लासानी का।

सद्गुरु प्रताप सिंह जी और शास्त्रीय संगीत

—प्रीतम सिंह पंछी

सद्गुरु प्रताप सिंह जी बचपन से ही शास्त्रीय संगीत की ओर रुचित हो गये थे। नौ वर्ष की अल्प आयु में ही श्री आदि ग्रन्थ साहब का पाठ करने लगे थे।

संगीत की परम्परा को श्री सद्गुरु प्रताप सिंह जी ने अपने पूर्वज सद्गुरुओं की भांति प्राप्त किया। संगीत के प्रति अधिक रुचि होने के कारण आपने भाई मस्तान सिंह पटियाला और भाई कालू नारोवाल से संगीत की शिक्षा प्राप्त की। दिलरुबा आपका प्रिय साज रहा है। बहुत से कलाकारों को आपने सम्मानपूर्वक अपने दीवानों में स्थान दिया। कई दरवेश कलाकारों से आपके निकट के संबंध थे, जैसे पंडित विष्णु दिगम्बर तुलसकर, नजाकत अली और सलामत अली बचपन से ही आपके दरबार में जाकर हाजिरी देते रहे हैं।

सद्गुरु प्रताप सिंह जी को धुपद तथा धमार के प्रति अथाह लगाव था। सद्गुरु जी सितार, सारंदा और दिलरुबा बड़ी कुशलता से बजाते थे। आप पखावज वादन में भी रुचि रखते थे। आप प्रातःकाल जब 'आसा दी वार' का कीर्तन करते, तो उस समय सभी रागों का अलग-अलग शब्दों में पृथक ढंग से उच्चारण करते थे। श्री आदि ग्रन्थ साहब में लिखित रागों को गाने का ढंग पड़ताल पौड़ी मिलाकर गाना आदि की ओर सद्गुरु जी की अपने समय में विशेष रुचि रही। आप कठिन से कठिन विलम्बित स्वर में आसानी से स्वरबद्ध होकर गा लेते थे, धमार, तीन ताल, पंजाबी ठेका, आपके मनपसंद ताल थे। प्रसिद्ध गायक सिंह बंधु श्री सुरेन्द्र सिंह के अनुसार—"सद्गुरु प्रताप सिंह जी एक संगीतमय आत्मा थे।" आप स्वयं 'ताऊस' बजाते थे और अपने सिखों की कीर्तन मर्यादा में उनका नेतृत्व करते थे। सद्गुरु जी एक महान श्रानी, संरक्षक और पंजाबी संगीतकारों का एक केन्द्र बिन्दु बन गये थे।

संगीत में आपकी रुचि इस सीमा तक थी कि जहां भी कोई संगीतकार मिल जाता तो सद्गुरु जी उसे सुनकर उसे समझने का प्रयास करते थे। गुरमति संगीत कला के साथ नाम वाणी के प्रचार हेतु सद्गुरु जी की एक विशेष लगन थी। मध्ययुग के भक्तिकाल में संत संगीतकारों की लगभग सभी रचनाएं संगीत के गुणों से भरपूर थी, जिन्हें सिख गुरुओं ने विशेष रूप से महत्त्व दिया और अपनी रचनाओं को संगीतबद्ध करके राग की ऐसी शैली को जन्म दिया जिसे आज हम 'गुरुवाणी संगीत' कहते हैं।

पंजाब के आधुनिक काल का संगीत गुरु साहिबान की देन है। मर्यादा के साथ कीर्तन करने का ढंग जो सबसे प्रथम है, रागी, 'शान' बजाते हैं। जिस राग में वाणी का गायन करना हो, उस तंती साजों में बजाने की क्रिया को 'शान' अथवा 'लहरा' कहते हैं। यह परम्परा गुरु नानक देव जी के समय से ही चली आ रही है।

संगीत प्रथा की क्षति होते देखकर सद्गुरु प्रताप सिंह जी ने गुरु रामदास जी के दरबार की सम्प्रदाय के प्रसिद्ध विद्वान भाई ताबा और भाई नसीर को श्री भैणी साहब बुलवाया था। आपने अपने दोनों साहबजादों वर्तमान सद्गुरु जगजीत सिंह जी और महाराज बीर सिंह को शास्त्रीय और शब्द गायन की प्राचीन रीतों की विरासत प्राप्त करने के लिए कई रागी रबाबियों की सहायता ली। महाराज बीर सिंह जी को विशेष करके पंजाबी अंग के तबले की शिक्षा भाई कादर बख्श से दिलवाई।

विद्यार्थियों को गुरमति संगीत की शिक्षा दिलवाने के लिए आपने विशेष ध्यान दिया और इस उद्देश्य हेतु श्री भैणी साहब में एक विद्यालय की स्थापना भी की। वहां संगीत की शिक्षा देने के लिए संगीताचार्य भाई हरनाम सिंह चविण्डा की अध्यापक के रूप में नियुक्ति की गयी। विद्यालय में उस्ताद ऊधो खान, उनके सुपुत्र रहीम बख्श, भाई ताबा और भाई नसीर बच्चों को संगीत में पारंगत बनाने में अपना योगदान देते रहे।

श्री भैणी साहब प्रारंभ से ही गुरमति संगीत का केन्द्र रहा है। अनेक संगीत समारोह इस धरती पर हो चुके हैं। सद्गुरु प्रतापसिंह जी के समय प्रसिद्ध हजूरी रबाबी कीर्तनिए, भाई लाल, भाई सुंदर, भाई संदल व मैंने परम्परा अनुसार कीर्तन किया करते थे।

श्री सद्गुरु प्रताप सिंह जी ने 1933 ई. में श्री भैणी साहब में गुरमीत संगीत सम्मेलन आयोजित करवाया। इसमें पुरस्कार प्रतियोगिता भी करवाई गयी। प्रतियोगिता के नियम थे कि जिस राग में वाणी की रचना हुई है, उसी राग में गायी जाये। दूसरा, तंती साजों का ही प्रयोग होगा। इस प्रतियोगिता के जज थे। भाई कान्ह सिंह नाभा, स. मुकन्द सिंह अम्बाला, संत हीरा सिंह और निहाल सिंह। प्रथम पुरस्कार भाई हरनाम सिंह ठट्ठा जिला फिरोजपुर, दूसरा पुरस्कार भाई समुंदर सिंह जी, रागी ननकाना साहब को प्राप्त प्राप्त हुआ और अनेक रागियों को भी पुरस्कृत किया गया।

अनेक पक्ष जो सद्गुरु प्रताप सिंह जी के व्यक्तित्व के अंग रहे हैं, उसमें एक अंग संगीत का है, जिसके आप महाविद्वान तथा कद्रदान थे। आपने गुरु घर की प्राचीन कीर्तन शैली की सार संभाल की, और उसका प्रचार-प्रसार भी किया। साथ ही शास्त्रीय संगीत की नवीन शैलियों का भी सम्मान किया। सद्गुरु प्रताप सिंह जी की कृपा से सद्गुरु जगजीत सिंह जी के पास श्री आदि ग्रन्थ साहब के रागों की प्राचीन रीतों का एक बहुत बड़ा खजाना सुरक्षित है।

अकाल पुरुष सद्गुरु जगजीत सिंह जी

–सुखबीर सिंह गुलाटी

सद्गुरु रामसिंह जी द्वारा चलाये गये स्वतंत्रता–संगाम से उत्पन्न देश की राजनैतिक जागृति से कांग्रेस पार्टी का संगठन हुआ जिसके साथ प्रत्येक स्तर पर पूर्ण सहयोग करते हुए सद्गुरु प्रतापसिंह जी के समय अनन्तः भारत स्वाधीन हुआ। किंतु उनका देहावसान होने पर जब श्री सद्गुरु जगजीतसिंह जी गुरु रूप में सुशोभित हुए तो स्वतंत्र भारत की पंजाब सरकार की ओर से नामधारियों को राहत मिलने के बजाय कठोरताओं का सामना करना पड़ा। किंतु काल की इस क्रूरता पर नियंत्रण पाने में सद्गुरु जी के साहस और सहनशीलता ने चमत्कारी प्रभाव दिखाया।

पिता–सद्गुरु के बिछोह तथा नामधारी केन्द्र पर पंजाब सरकार का प्रकोप, आश्रम के पशुओं की नीलामी व कुर्की, सेवकों पर नित्य नये आरोप व मुकदमे तथा युवा पीढ़ी के धर्माचरण व आस्था का अपनयन तो असहय थे ही, साथ ही सामाजिक अनुशासनहीनता तथा विदेशों में निवास करने वाले नामधारियों के संगठनों में आई शिथिलता सद्गुरु जी के सम्मुख विकराल समस्या के रूप में खड़ी थी, जिस समय सद्गुरु जी ने पंथ–नैयया की पतवार अपने कर–कमलों में थामी।

धर्म–कर्म का विस्तार

सद्गुरु जी ने धर्म–कर्म के विस्तार का कार्य प्रारंभ करते ही श्री जीवन नगर, श्री भैणी साहिब (प्रमुख नामधारी केन्द्रों) में गुरु मंत्र जाप व प्रार्थना–सभाओं पर विशेष बल दिया। नामधारी मर्यादानुसार गुरु मंत्र के अन्तर्जाप को "भजन" तथा गुरु चरणों में प्रार्थना को "अरदास" कहते हैं। सर्वप्रथम आपने सामूहिक "नाम सिमरन" (गुरु मंत्र जाप) नामधारियों के नित्य कर्म में एक घंटा नाम सिमरन को रोचक बनाने के लिए पूर्व सद्गुरु जी के टेप–प्रवचन सुनने की परिपाटी डाली।

आपने धार्मिक–सामाजिक सुधार–अभियान के आरंभ में ही युवा पीढ़ी को अपने प्रवचनों के जादू से प्रभावित कर लिया। प्रत्येक गांव व नगर के किशोरों व युवाओं का संयमी जीवन जीने के लिए मनोबल तैयार किया। (कठोर संयम में रहने को नामधारी "शोध साधना" कहते है)।

पिता सद्गुरु जी ने अपने जीवन काल में आदि श्री ग्रन्थ साहिब के तीन बार सवा–सवा लाख संपूर्ण पाठ करवाये थे। उसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए सद्गुरु जगजीत सिंह जी सद्गुरु रामसिंह जी के दर्शन निमित्त एवं विश्व–कल्याण हेतु ग्रन्थ साहिब के सवा लाख पाठ एक बार तो सम्पूर्ण कर चुके हैं और अब दूसरी बार फिर जारी है।

साहित्यिक अभिरुचियों को बढ़ावा

सद्गुरु जी ने नामधारी समुदाय में साहित्यिक अभिरुचियों के अभिसंचन और संवर्धन हेतु, साहित्यिक रुचि वाले बच्चों व किशोरों को नामधारी साहित्यिक सभा के रूप में संगठित किया है तथा उनके साहित्यिक उद्यमों को निरंतर प्रोत्साहन दे रहे हैं।

नामधारी–साहित्यिक क्षेत्र में संत मंगल सिंह लायलपुरी का "नवां हिन्दुस्तान" डा० अमर भारती का "सतगुर तिसका नाउ" ज्ञानी मेहर सिंह का पुरख गुरु" संत तरन सिंह वहमी का" जस जीवन" मास्टर निहाल सिंह का "सीतलता दा स्रोत" श्री प्रीतम सिंह कवि का "सिमरन" सरदार नाहर सिंह का "नामधारी इतिहास" श्री एम. एम. अहलूवालिया का "कूका सिखज (अंग्रेजी) प्रशंसनीय कार्य है। इसके अतिरिक्त महाराज वीरसिंह, संत आत्मा सिंह सन्खत्रा, सरदार जगदीश सिंह, सरदार दिलीप सिंह नामधारी तथा अन्य कई नामधारी युवक युवतियां साहित्यिक एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में सद्गुरु जी के आशीर्वाद एवं प्रोत्साहन से उल्लेखनीय योगदान कर रहे हैं।

नामधारी समुदाय के बाहर के कई लेखकों व विद्वानों के साहित्यिक उद्यमों को भी सद्गुरु जी के व्यक्तित्व ने आकृष्ट किया है। इनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं–सरदार बूटा सिंह, सरदार कृपालसिंह कसेल, डाक्टर कपूर सिंह, प्रोफेसर डाक्टर हरिभजन सिंह।

वातावरण शांत

ब्रिटिश शासन की भांति ही सरदार प्रताप सिंह कैरो ने नामधारियों के प्रति बहुत कड़ा रुख अपना रखा था। बदले में श्री सद्गुरु जी की ओर से सहज सद्भावना एवं प्रेमपूर्ण व्यवहार पाकर सरदार कैरो को अपने नीति बदलने को विवश होना पड़ा। अनन्तः कैरो सरकार के सौमनस्य से सारा वातावरण शांत हो गया। घरेलू उलझनें तो गुरु नानक देव जी के समय से ही गुरु–इतिहास का अंग बनी रही हैं। किंतु सद्गुरु जगजीत सिंह जी की गहन क्षमाशीलता, उदारता, दृढ़ता तथा हार्दिक मैत्री भाव ने ऐसी सभी घरेलू उलझनों व विवादों का अंत कर दिया है। कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों को अपने प्रथकतावादी प्रयासों में मुंह की खानी पड़ी तथा अन्त में सद्गुरु जगजीतसिंह को ही सर्वोपरि मानकर उन्होंने सिर झुका दिया।

देश–विदेश के नामधारी

सद्गुरु जगजीत सिंह जी के स्नेह–स्वभाव का घेरा विशाल होकर पांचों महाद्वीपों की सीमाओं तक पहुंच गया है, जिनमें थाईलैंड, बर्मा, मलेशिया सिंगापुर, जापान, हांगकांग, अरब देश, इंग्लैंड, जर्मनी, स्विट्जरलैंड, हालैंड, अमरीका, अफ्रीका, कैनेडा आदि देशों में वास कर रहे श्रद्धालुओं की मनोकामनाएं पूरी करने के लिए कार्यक्रम अनवरत गति से जारी हैं ताकि सद्गुरु जी का पुण्य प्रभाव नामधारियों पर पड़ता रहे तथा वहां की नयी पीढ़ियों पर पड़ता रहे तथा वहां की नयी पीढ़ी में नामधारील–परम्पराओं की आस्था टूटने न पाए। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहां सद्गुरु जी के देवी प्रभाव से देश व विदेशों के वासी आसुरी वृत्ति (तामसिक आहार–बिहार) त्याग कर देवी वृत्ति के धारक बनें।

(क्रमशः...)

RNI Registration No. DILBIL 2002/7533 Post Registration No. DL (C)-14/1041/05/

108 मनकों की माला का महत्व

ईश्वर के प्रति आस्था रखने एवं गुरु को मानने वाला प्रत्येक जीव जपमाला का प्रयोग अवश्य करता है। धार्मिक–प्राचीन परम्पराओं और मर्यादा के अनुसार कई प्रकार की जपमाला के प्रयोग का विधान है। केवल देहधारी गुरु ही बता सकता है कि उसके शिष्य के लिए कौन सी माला प्रयोग कारक है अथवा नहीं। नामधारी सिखों में 108 मनकों की ऊन से निर्मित माला प्रयोग में लाई जाती है। योगतंत्र में भगवान शिवशंकर का कथन है:–

25 मनकों की माला मुक्तिदायक, 27 की पुष्टिकारक, 30 की ध्यानदायक 50 की मंत्रसिद्धि प्रदान करने वाली व 108 मनकों की माला सर्वकामना पूर्णक, सर्वफलदायक और सर्वसिद्धि प्रदान करने वाली है। 108 संख्या ब्रह्मस्वरूप, ब्रह्मवाचक, ब्रह्म प्रतीक है। यदि हम नागरी लिपि के व्यंजनों में से ब–र–ह–म का संख्या अनुसार जोड़ करे तो हमें 108 अंक प्राप्त होगा। जैसा कि–

ब+ र + ह + म	क ख ग घ ङ	च छ ज झ ण
23 27 33 25	ट ठ ड ढ ण	त थ द ध न
108 = ब्रह्म	प फ ब भ म	य र ल व श
	ष स ह	य र ल व श

सम्पूर्ण वेद–शास्त्र, उपनिषद इत्यादि 50 अक्षरों के सुमेल से निर्मित है । अर्थात् अ से क्ष तक के 50 वर्णों से असंख्य शब्द, इन शब्दों से असंख्य वाक्यों का निर्माण ही सब ग्रन्थों का मूल है। तंत्र शास्त्र के अनुसार :–

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः
क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण।
त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह क्ष

इन पचास वर्णों का अनुलोम व प्रतिलोम अर्थात् अ से क्ष तक की संख्या 50 इसी प्रकार क्ष से अ तक की संख्या 50। कुल 100 अक्षर। इन वर्ण वर्गों का प्रथम अक्षरों का योग 8 है। इस प्रकार हमें 108 संख्या प्राप्त होती है।

108 संख्या ब्रह्माण्ड की परिचायाक है। 9 ग्रहों और 12 राशियों को गुणा करने पर 108 संख्या प्राप्त होगी। 27 नक्षत्र क्रमशः अश्वनि, भरणी, कृत्तका, रोहिनी, मृग शिरा, आर्द्रा, पुर्नवसु पुष्य, शलेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, हंस चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्टा, मूल, पूर्वासादी, उत्तरासादी, श्रवण, धनिष्य, शतभिखा, पूर्वाद्रपदा, उत्तराभद्रपदा व रेवती। यह नक्षत्र ब्रह्माण्ड में चन्द्रमा का मार्ग निर्माण करते हैं। चन्द्रमा इसी मार्ग द्वारा पृथ्वी की परिक्रमा करता है। इनका हमारी जीवनचर्या पर प्रभाव अवश्य पड़ता है। इनके कुप्रभाव से बचने का उपाय गुरु से प्राप्त नाम को जप माला द्वारा जपना है।

नक्षत्र जिनकी संख्या 27 है। प्रत्येक नक्षत्र के चार अक्षर है। 27 X 4 = 108। इस प्रकार 108 मनकों की माला सर्वप्रयोजन सिद्ध करने वाली है।

–स्वतंत्रपाल सिंह

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक, सम्पादक स्वतंत्रपाल सिंह कटोच द्वारा कंसल प्रिंटर्स सी–बी 36, रिंग रोड, नारायणा, नई दिल्ली–110028 व नामधारी प्रिंटिंग वर्क्स 5892, बस्ती हरफूल सिंह, सदर बाजार दिल्ली–110006 से मुद्रित करवाकर कार्यालय प्रथम भारतीय 1681 ए, मेन बाजार पहाड़गंज (चित्रगुप्त रोड) नई दिल्ली–110055 से प्रकाशित किया।

9

10

11

12

13

14

15

16

GOVT. OF BHARAT RNI REGISTRATION NO. -DELBIL/2002/7533

श्री सतगुरु जगजीत सिंह जी

"श्री सतगुरु राम सिंह जी ने धर्म को ऊपर रखा है तथा राजनीति को नीचे। जीव दिन-रात धन के पीछे भागा फिरता है किन्तु जो वस्तु किसी को प्राप्त होनी है, वह उसको अवश्य प्राप्त होती है। उसको कोई रोक नहीं सकता तथा जो नहीं प्राप्त होनी वह दिन-रात भागने पर भी नहीं मिलेगी। जो सतगुरु के आदेश में रहता है वह सुखी रहता है उसको कोई कष्ट नहीं आयेगा"।
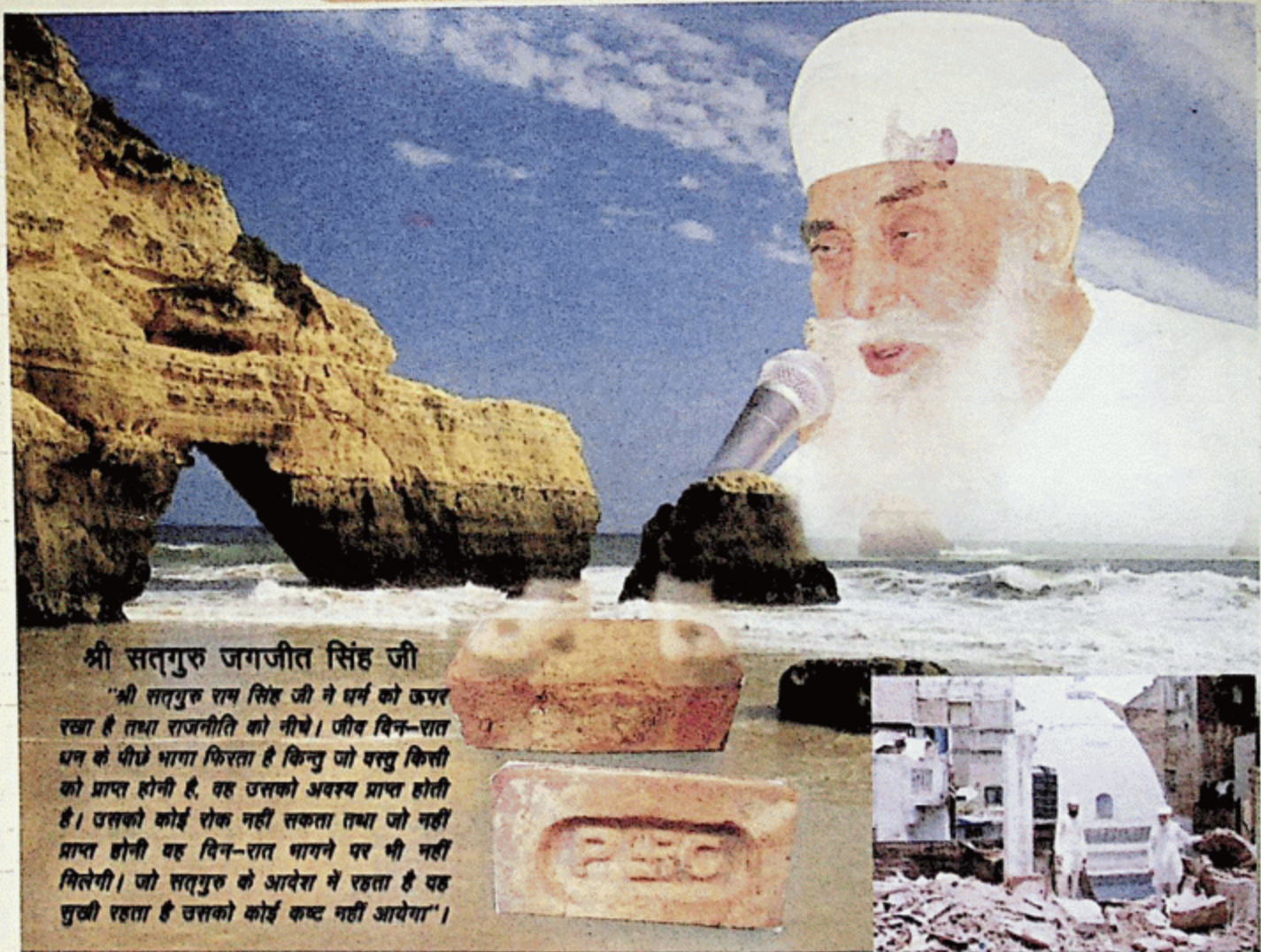
Pratham Bhartiya 1681A, Main Bazar Pahargang
Opp. Chitra Gupt Mandir, New Delhi-55, Tel.: 011-23580875

OWNER, PRINTER, PUBLISHER, EDITOR - SWATANTRA PAL SINGH KATOCH, PLACE OF PUBLICATION 1681A, MAIN BAZAR PAHARGANG, NEW DELHI-55 AND PRINTED BY AT KANSIL PRINTERS CB-36, RING ROAD NARAYANA, NEW DELHI-28, NAMDHARI PRINTING WORKS-5882, BASTI HARPHOOL SINGH, SADAR BAZAR DELHI-06